रीडिंग अभियान के दो महीने कुछ अनुभव

शहनाज़ शेख

हर अभियान की कुछ सीमाएँ होती हैं और कुछ फायदे। इन दोनों पक्षों को टटोलता है यह अनुभव।

रीडिंग कैम्पेन यानी पढ़ने का अभियान। यह अभियान राजस्थान सरकार द्वारा सभी सरकारी स्कूलों में दो महीने के लिए प्लान किया गया था। स्कूलों के शिक्षकों को ये निर्देश दिए गए कि वे हर रोज़ अनिवार्य रूप से दो घण्टे रीडिंग कैम्पेन के लिए सुनिश्चित करें।

इस अभियान की पृष्ठभूमि कुछ इस प्रकार है - 'असर'* द्वारा प्रति वर्ष अक्टूबर-नवम्बर माह में बच्चों के सीखने के स्तर का आकलन करने के लिए 2005 से राष्ट्रीय स्तर पर एक सर्वे किया जाता रहा है। 2010 में इस आकलन की रिपोर्ट में कई चौकाने वाले तथ्य सामने आए। यह पाया गया कि सरकारी स्कूलों में पाँचवीं कक्षा में पढ़ने वाले केवल 53 प्रतिशत बच्चे दूसरी कक्षा की पाठ्यपुस्तक पढ़ने में सक्षम हैं तथा गणित के हाल तो और भी बुरे हैं। पाँचवीं में भाग के सवाल हल करने वाले बच्चों का अनुपात 2009 में 38 प्रतिशत से गिरकर 2010 में 36 प्रतिशत हो गया, इसी प्रकार की गिरावट घटाने के सवाल हल कर सकने वाले बच्चों के प्रतिशत में भी आई। इन्हीं बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुए बच्चों की पढ़ने की कुशलता और बुनियादी गणितीय क्षमताओं पर विशेष रूप से ध्यान देने के लिए आगाज़ हुआ रीडिंग कैम्पेन का।

इसके अतिरिक्त रिपोर्ट द्वारा इस तथ्य की भी पुष्टि हुई कि नामांकन तो बढ़कर 96 प्रतिशत से भी अधिक हो गया है किन्तु बच्चों का सीखने का स्तर दिन-पर-दिन गिर रहा है। इस दौरान मैं और मेरे कुछ साथी पीरामल फैलो के तौर पर सरकारी स्कूलों के साथ काम कर रहे थे। हमने स्कूलों में चल रहे रीडिंग कैम्पेन कार्यक्रम का करीब से अवलोकन किया और मुझे इस अभियान के विभिन्न

* *aser - annual status of educational report*

पहलुओं को निकट से देखने और समझने का अवसर मिला।

प्रमुख सीमाएँ

कहने को तो यह अभियान एक अच्छी मंशा से शुरू किया गया था पर साथ में यह कुछ अनचाहे परिणाम लेकर भी आया। उदाहरण के लिए, एक स्कूल में तीन बच्चे काफी कमज़ोर थे, शिक्षकों ने उनका नाम यह कहकर काट दिया कि वे उनका रीडिंग कैम्पेन का रिज़ल्ट खराब कर देंगे। एक अन्य विद्यालय के प्रधानाध्यापक ने एक अच्छी पहल करते हुए अपने स्कूल में दस ऐसे विद्यार्थियों को प्रवेश दिया जो प्राइवेट स्कूलों से कमज़ोर कहकर निकाल दिए गए थे। उनके इस कदम का इस स्कूल के शिक्षकों ने पुरज़ोर विरोध किया, उनका तर्क था, "प्राइवेट स्कूल का कचरा हम क्यूँ ढोएँ। जब रीडिंग कैम्पेन की चेकिंग होगी तो अधिकारी हमसे सवाल-जवाब करेंगे कि इन बच्चों को कुछ आता क्यों नहीं है।" खैर, प्रधानाध्यापक ने जैसे-तैसे शिक्षकों को समझा-बुझाकर इन बच्चों को प्रवेश दे दिया। उन्होंने शिक्षकों को यह कहकर शान्त किया कि अधिकारियों को जवाबदेही के लिए वे मौजूद रहेंगे और शिक्षकों को किसी किस्म की चिन्ता करने की ज़रूरत नहीं है। ये चन्द उदाहरण हैं जो दिखाते हैं कि किस प्रकार के कारकों की वजह से बच्चों का नामांकन प्रभावित होता है।

स्तर-निर्धारण में घालमेल

रीडिंग कैम्पेन चलाने के लिए स्कूलों को स्पष्ट निर्देश दिए गए कि वे अपने स्कूल में कक्षा तीन से लेकर पाँच तक के बच्चों का स्तर निर्धारण करके उन्हें तीन समूहों में बाँट दें। पहला समूह यानी समूह 'ए' उन बच्चों का होगा जो बिना किसी कठिनाई के कहानियाँ एवं अपनी पाठ्यपुस्तक पढ़ सकते हैं। दूसरा होगा समूह 'बी', इस समूह में वे बच्चे आएँगे जो अक्षरों को जोड़-जोड़ कर अटक-अटक कर परेशानी से पढ़ पा रहे हैं। तीसरे और अन्तिम समूह यानी समूह 'सी' में उन बच्चों को रखने को कहा गया जिन्हें वर्णों की पहचान नहीं है।

अब इस समूहीकरण में स्कूलों ने किस तरह से हेर-फेर किए, उसे समझना काफी रुचिकर होगा। अध्यापकों और प्रधानाध्यापकों ने अपनी शालाओं के सभी बच्चों को जानबूझकर 'बी' या 'सी' समूह में रखा, यानी जो बच्चा 'ए' समूह के मानक पूरे कर रहा था, उसे भी 'बी' में डाला गया। इस नाइन्साफी पर शिक्षकों से सवाल करने पर हमें यह जवाब मिला, "अभी 'सी' में डाला है, दो महीने बाद 'बी' में दर्शा देंगे, इससे हमारी प्रोग्रेस दिखेगी।" इस प्रकार एक बच्चा जो 'ए' समूह का था, उसको 'बी' में दर्शाकर और 'बी' समूह के बच्चे को 'सी' में दर्शाकर स्कूलों ने अपना पल्ला झाड़ा और यह अभियान सिर्फ दो समूहों 'बी' और 'सी' पर ही केन्द्रित होकर रह गया। यानी इन दो महीने कमज़ोर बच्चों पर थोड़ा ज़्यादा ध्यान दिया गया और वे बच्चे जो तेज़ी के साथ पढ़ सकते हैं, उनके पढ़ने व समझ का स्तर मापने और सुधारने के लिए कोई खास प्रयास नहीं किए गए। मैं यह इसलिए कह रही हूँ क्योंकि एक स्कूल में मेरे साथियों को ऐसे बच्चे मिले जो लिखे हुए को पढ़ने में तो बहुत तेज़ थे किन्तु पढ़कर अर्थ-निर्माण करना उन्हें नहीं आता था।

रीडिंग कैम्पेन या बीटिंग कैम्पेन

रीडिंग कैम्पेन के दौरान शिक्षकों को तीसरी, चौथी और पाँचवीं के उन बच्चों की ओर भी ध्यान देना पड़ा जिनको अभी तक वे ध्यान देने योग्य नहीं समझते थे पर इसके कुछ हानिकारक परिणाम भी हुए। इन बच्चों से यह अपेक्षा की गई कि वे तीव्र गति से वह सब सीख लें जो वे अब तक स्कूल में बिताए गए तीन, चार या पाँच सालों में नहीं सीख सके। इसके फलस्वरूप शुरू हुई इन मासूमों की अन्धाधुन्ध पिटाई। मैं ऐसी दो कक्षाओं की साक्षात् गवाह हूँ जहाँ रीडिंग कैम्पेन में पिछड़ गए बच्चों को शिक्षक बेदर्दी से पीट रहे थे (ये बात और है कि 'शिक्षा का अधिकार' कानून स्कूलों में बच्चों को दिए जाने वाले किसी भी किस्म के शारीरिक दण्ड पर रोक लगाता है)। एक स्कूल में शिक्षिका हिन्दी की बारहखड़ी पढ़ा रही थीं और चौथी के कुछ बच्चों को डण्डे से मार रही थीं, इन बच्चों को वर्णों की पहचान और

बारहखड़ी में समस्या थी। एक अन्य स्कूल में गणित के शिक्षक एक बच्ची को ताबड़तोड़ तमाचे सिर्फ इसलिए लगा रहे थे क्योंकि पहाड़े न आने के कारण वह गुणा के सवाल हल नहीं कर पा रही थी। इसलिए मैंने यह निष्कर्ष निकाला कि इस कैम्पेन का नाम आंशिक तौर पर शायद बीटिंग कैम्पेन रखना ज़्यादा बेहतर होगा।

रिपोर्टिंग में बेध्यानी

रीडिंग कैम्पेन के अन्तर्गत प्रत्येक शनिवार बच्चों की साप्ताहिक प्रगति का मूल्यांकन किया जाता था। मैंने जब ये रिपोर्ट पढ़ीं तो मुझे कुछ हास्यास्पद चीज़ें देखने को मिलीं। उदाहरण के लिए, मैंने देखा कि कुछ बच्चे जिन्हें पहले सप्ताह में 'बी' समूह में दिखाया गया, अगले ही सप्ताह उन्हें 'सी' में दर्शा दिया गया यानी वे अटक-अटक कर पढ़ने वाले बच्चों के समूह से अचानक ही वर्णों की पहचान में समस्या वाले समूह में पहुँच गए।

इसी प्रकार सरकार को भेजी गई अन्तिम प्रगति रिपोर्ट में सभी बच्चों को प्रधानाध्यापकों ने 'बी' समूह में दर्शा दिया क्योंकि प्रावधान यह है कि यदि किसी स्कूल के बच्चे रीडिंग कैम्पेन की समाप्ति पर 'सी' समूह में पाए गए तो उस स्कूल के द्वारा उनके लिए अतिरिक्त कक्षा की व्यवस्था करनी पड़ेगी (हालाँकि ये अनिवार्य नहीं है)। इसके फलस्वरूप अतिरिक्त कक्षा के

झंझट से बचने के लिए प्रधानाध्यापकों ने सभी बच्चों को 'बी' में दर्शा दिया यानी आम के आम और गुठलियों के दाम - एक तरफ उनके बच्चों की प्रगति भी दिखी और दूसरी तरफ वे अतिरिक्त कक्षा के बोझ से भी बच गए।

हताशाओं के बीच आशाओं की किरण

ऊपर वर्णित हताशाओं के बावजूद कुछ सरकारी स्कूल ऐसे भी देखने को मिले जहाँ रीडिंग कैम्पेन के दो महीनों का अच्छे ढंग से प्रयोग किया गया और बच्चों की पढ़ने की कुशलता के साथ-साथ लिखने के अभ्यास पर भी काफी ध्यान दिया गया।

एक तरफ कुछ स्कूलों ने इसे सिर्फ दो महीने का सरकारी आदेश समझकर खानापूर्ति की तो चन्द स्कूल ऐसे भी मिले जहाँ शिक्षकों ने यह महसूस किया कि इससे उन्हें अपने बच्चों का स्तर समझ में आ गया है और कहने को तो रीडिंग कैम्पेन खत्म हो गया है पर वे व्यक्तिगत स्तर पर इसे साल भर जारी रखेंगे।

कुछ अवलोकन, कुछ सवाल

रीडिंग कैम्पेन के इन दो महीनों ने मुझे भी अपनी कुछ मान्यताओं को परखने का अच्छा अवसर उपलब्ध कराया। साथ ही, यह अभियान मेरे मन में भी कुछ सवाल और विचार छोड़ गया:

1. जिन विद्यालयों में रीडिंग कैम्पेन का सही ढंग से अनुपालन किया गया, वहाँ आवश्यक रूप से बच्चों के सीखने की गति में प्रगति हुई यानी हर बच्चा सीख सकता है यदि उसे आवश्यक मौके प्रदान किए जाएँ।

2. यदि शिक्षक चाह लें तो हर बच्चा सीख सकता है जैसा कि रीडिंग कैम्पेन के दौरान सामने आए कुछ उदाहरणों से समझ में आया परन्तु शिक्षक की यह चाह बिना किसी सरकारी निर्देश के क्यों नहीं उत्पन्न होती? क्या रीडिंग कैम्पेन जैसे ऊपर से थोपे गए प्रयोगों से ही शिक्षक जागरूक होगा, सोचने की बात है।

शहनाज़ शेख: स्वतंत्र अनुवादक के रूप में कार्यरत हैं। खास तौर से बच्चों के साथ कार्य करना पसन्द है – पूर्व में *बचपन बनाओ* संगठन के साथ जुड़ी रही हैं। वर्तमान में, मदरसे में बच्चों के साथ कहानी वाचन और ओरिगेमी के सत्रों का संचालन करती हैं।

सभी फोटो: शहनाज़ शेख।

यह लेख सन् 2013 में *पीरामल फाउण्डेशन* के गाँधी फैलोशिप कार्यक्रम से जुड़े रहने के दौरान लिखी गई रिपोर्ट पर आधारित है।

— — — — — — — —